कानून व फ्यूहरर की इच्छा एक ही बात है

(नोटबंदी पर सुप्रीम कोर्ट व वनभूलपुरा में 4 हजार से अधिक घर गिराने के हाईकोर्ट के फैसले के संदर्भ में)

जहांगीरपुरी में सुप्रीम कोर्ट द्वारा रोक के बावजूद बुलडोजर चलाए जाने पर जजों की चुप्पी, जकिया जाफरी की अपील पर फैसला देते हुए तीस्ता सीतलवाड़ व सेवा निवृत डीजीपी आरबी श्रीकुमार को अपराधी घोषित करना, मोहम्मद जुबैर की गिरफ्तारी, छत्तीसगढ़ में आदिवासियों की सुरक्षा बलों द्वारा माओवादी कहकर की गई हत्या की जांच की मांग के 13 साल पुराने मामले में हिमांशु कुमार को सजा और महाराष्ट्र में दल बदल कानून के बावजूद कोर्ट के दखल से बीजेपी को सत्ता में लाने वाले फैसले सभी इस बात को साफ दिखाते हैं कि भारत की उच्च न्यायपालिका ने बुर्जुआ जनतंत्र में ओढ़ा गया निष्पक्षता व न्याय का ऊपरी दिखावटी मुखौटा भी खुद ही नोंच फेंका है और अब यह फासीवादी सत्ता को स्थापित करने व उसके रास्ते में आने वाली कानूनी अड़चनों को मिटाने का खुला औजार बन गई है।

तीस्ता, श्रीकुमार व हिमांशु कुमार का जुर्म यही था कि ये गुजरात से छत्तीसगढ़ तक निर्दोषों की बुर्जुआ राजसत्ता व समानांतर फासिस्ट वाहिनियों द्वारा की गई हत्याओं पर अपना मुंह बंद रखने के बजाय 20 व 13 सालों से उसकी उपयुक्त व निष्पक्ष जांच की मांग करते आ रहे थे, जिसके लिए न्यायपालिका तैयार नहीं थी। इस अपराध को बेहद गंभीर बताते हुए सुप्रीम कोर्ट ने इनके खिलाफ न सिर्फ झूठे मुकदमे करने के आरोप में बल्कि भारतीय राज्य को अस्थिर करने के इल्जाम में साजिश करने के आरोपों में भी जांच व पुलिस-सीबीआई जिन धाराओं-कानूनों में भी 'उचित' समझे, उनमें कार्रवाई करने का आदेश सुना दिया है। स्पष्ट है कि सुप्रीम कोर्ट न सिर्फ उनके उन आरोपों की जांच नहीं कराएगा, जिनसे संबंधित अपराध वास्तव में हुए थे और जिनके लिए किसी को सजा नहीं हुई है, बल्कि उन अपराधों के लिए जिनका कोई आरोप अब तक इन सामाजिक कार्यकर्ताओं पर खुद पुलिस ने नहीं लगाया था (सिर्फ एक राजनीतिक समूह लगा रहा था), इन मुकदमों में जिन आरोपों पर सुनवाई हो ही नहीं रही थी, जिन पर नीचे की अदालतों में अभी कोई सुनवाई तथा फैसला नहीं हुआ था, जिनकी अपील ही सुप्रीम कोर्ट के सामने नहीं थी, जिन पर वकीलों ने कोई जिरह तक नहीं की थी, उन (काल्पनिक) आरोपों में सुप्रीम कोर्ट ने इनको अपराधी घोषित कर पुलिस को इनके खिलाफ मुकदमा दर्ज करने का आदेश दिया है।

हालांकि हम तो पहले से जानते हैं कि न्यायपालिका भी राजसत्ता के दमनकारी औजारों में से एक है। मगर यह न्याय के दिखावे के जरिए इस दमन को न्यायसंगत ठहराकर बुर्जुआ जनतंत्र के लिए सेफ्टी वाल्व का काम भी करता है। पहले और अब में फर्क यह है कि 'न्याय के दिखावे' का आवरण उतारकर अब न सिर्फ ऐसी मांगों को दरकिनार व रद्द किया जाएगा बल्कि अपराध की जांच करा अपराधी की पहचान और सजा की मांग करने वालों को ही कैद में डाला जाएगा, यह खुला ऐलान सुप्रीम कोर्ट द्वारा कर दिया गया है। इस फैसले ने अदालत में न्याय की खोज को ही एक आपराधिक कृत्य बना कर पूरी बुर्जुआ न्यायप्रणाली के घोषित सिद्धांतों को पलट कर उनके दमनकारी फासीवादी चरित्र को जगजाहिर कर दिया है। कुछ साल पूर्व खुद इसी कोर्ट में रहे जज मदन लोकुर तक भौंचक्का हैं और उन्होंने इसे काला दिन करार दिया है।

1983 में बनी एक फिल्म का दृश्य चार साल पहले ट्वीट करने, महिलाओं के सामूहिक बलात्कार का हांका लगाने वाले को नफरती कहने व सुदर्शन टीवी के फर्जी प्रचार के झूठ को बेनकाब करने के गंभीर 'अपराध' में आल्ट-न्यूज के संस्थापकों में से एक व मशहूर तथ्य-पड़ताली मोहम्मद जुबैर की साम्प्रदायिक

वैमनस्य फैलाने के नाम पर दिल्ली में गिरफ्तारी और उसके बाद उप्र के 6 अलग जिलों में मुकदमे, गिरफ्तारियां, पुलिस हिरासत, जमानत नामंजूर किये जाने आदि का मामला भी साफ है कि पूरी राजसत्ता एक सच बोलने पर अडिग व्यक्ति को निशाना बनाने पर बजिद है और सुप्रीम कोर्ट को इसकी सुनवाई के लिए समय नहीं है हालांकि उसके चीफ जस्टिस बारहा बयान देते हैं कि व्यक्ति स्वतंत्रता पवित्र है, जमानत नियम है और कैद अपवाद! किंतु हकीकत में सिर्फ अर्नब गोस्वामी, जनसंहारों की हांक लगाते टीवी एंकर या फासिस्ट सरकार के लिए गैरकानूनी काम करते अफसर ही सुप्रीम कोर्ट की इस 'पवित्र' व्यक्ति स्वतंत्रता के अधिकारी हैं जिनके लिए न सिर्फ सुप्रीम कोर्ट एक दिन की भी देर न हो इसके लिए छुट्टी के दिन भी सुनवाई कर जमानत देता है बल्कि बिना याचिका दायर हुए अगले दिन सुनवाई की तारीख भी दे देता है। 'कुछ खास' व्यक्ति हैं जिन्हें रात को याचिका दायर करने पर अगले दिन सुबह सुनवाई की तारीख मिल जाती है तो 'कुछ और' हैं जो सालों से जेलों में कैद हैं और कोर्ट को समय नहीं। अत: उनके लिए महीनों से पहले तारीख तक नहीं मिलती। इन दोनों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता की 'पवित्रता' मापने के लिए सुप्रीम कोर्ट रजिस्ट्री में शायद अलग पैमाने रखे गए हैं। सुप्रीम कोर्ट के ही एक और पूर्व जज दीपक गुप्ता कहते हैं कि जज ने पुलिस से यह क्यों नहीं पूछा कि जब जुबैर के ट्वीट से 4 साल तक साम्प्रदायिक अमन पर कोई आंच नहीं आई तो अब गिरफ्तारी की वजह क्या है?

एक और न्यायपालिका के दुरुपयोग का इल्जाम लगाकर कोर्ट सामाजिक कार्यकर्ताओं को जेल भेज रहा है तो उधर जहांगीरपुरी में सुप्रीम कोर्ट द्वारा रोक के बावजूद बुलडोजर से घर गिराते रहने वाले म्यूनिसिपलटी अफसरों पर उसकी जबान को लकवा मार गया है। मद्रास और दिल्ली हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस रह चुके एपी शाह कहते हैं, "अगर सुप्रीम कोर्ट न्याय करना चाहता है तो उपयुक्त कार्रवाई करे और दोषी अफसरों को जेल भेजे।" वे 'पूर्व स्थिति की बहाली' और 'मुआवजा तय' करने को भी कहते हैं। वे बेहिचक कहते हैं, "मैं मुस्लिमों के खिलाफ स्पष्ट अभियान देख पाता हूं" और "उच्चतम स्तर पर माफी मांगने" का आह्वान करते हैं। तीस्ता/श्रीकुमार मामले में जज मदन लोकुर भी अप्रत्यक्ष तौर पर ऐसा ही कहते हैं कि सुप्रीम कोर्ट जजों को अपनी और से "खास सुनवाई कर स्पष्टीकरण देना चाहिए कि उनका इरादा तीस्ता की गिरफ्तारी नहीं था।" संभवत: यह कुछ ज्यादा ही आशावाद है!

जस्टिस एपी शाह का बिना शक निष्कर्ष है, "मैं निर्वाचित तानाशाही का स्पष्ट उभार देखता हूं। .. नेता जनतांत्रिक संस्थानों का प्रयोग कर जनतंत्र की हत्या कर रहे हैं" और "चुनाव आयोग, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग तथा मीडिया सभी इसमें शामिल हो चुके हैं।" महाराष्ट्र में भी दलबदल कानून के मामले में जिस तरह सुप्रीम कोर्ट ने विपक्षी सरकार की याचिकाओं पर वक्त पर फैसले देने से इंकार किया और केंद्र की सत्ताधारी पार्टी को मदद पहुंचाने वाले कदम तुरंत उठाए, उसने दोनों पक्षों में राजनीतिक लड़ाई का फैसला कर दिया और महाराष्ट्र की सरकार के पास समर्पण के सिवा कोई रास्ता ही नहीं बचा। आधार, चुनावी बॉन्ड, यूएपीए, दिल्ली शासन के अधिकारों में केंद्र-राज्य विवाद से लेकर न जाने कितने मामले हैं जहां मामलों को सालों-सालों लटकाकर कोर्ट सत्ताधारी पार्टी को वास्तविक स्थिति बदल कोर्ट के किसी भी फैसले को बेमानी बनाने का मौका दे चुका है (तीनों जजों के उद्धरण हिंदुस्तान टाइम्स, 17 जुलाई 22 के करण थापर के लेख से)।

वैसे खुद सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस ने 16 जुलाई को दिल्ली में भाषण देते हुए कहा है कि एक आधुनिक जनतंत्र में जनता उम्मीद करती है कि कोर्ट विधायिका और कार्यपालिका की अतियों को संतुलित करने वाली प्रतिशक्ति का काम करें और "दुर्भाग्य से विपक्ष के लिए जगह सिकुड़ रही है। हम बिना विस्तृत विमर्श व पड़ताल के कानून बनते देख रहे हैं।.. ये स्वस्थ जनतंत्र के लक्षण नहीं हैं।" उसी दिन दिल्ली में ही एक और भाषण में, "हमारे आपराधिक न्यायतंत्र में प्रक्रिया ही सजा है।" और "ताबड़तोड़ बिना पड़ताल गिरफ्तारियों से जमानत में भारी अड़चन से फैसले के इंतजार के दौरान लंबी कैद पर तुरंत गौर करने की जरूरत है।.. हमारी आपराधिक न्याय प्रणाली को गंभीरता से प्रभावित करने वाला मुद्दा जेलखानों में मुकदमा अंतर्गत कैदियों की बड़ी तादाद है। भारत की 1378 जेलों में 6.10 लाख कैदियों में 80 प्रतिशत यही हैं।" (हिंदुस्तान टाइम्स, जुलाई 17) अर्थात चीफ जस्टिस भी कहते तो हैं जमानत मिलनी चाहिए, बिना पड़ताल हिरासत गलत है, नागरिक स्वतंत्रता अत्यंत अहम है, संसद व अफसरशाही विपक्षियों की बोलने की आजादी पर पाबंदी लगा रही है, कानून गलत बनाए जा रहे हैं, पर कोर्ट में इसके विपरीत कुछ करने की इच्छा या इच्छाशक्ति जजों के पास नहीं है।

हम मार्क्सवादी तो जानते ही हैं कि वर्ग विभाजित समाज में राजसत्ता वर्ग शासन का औजार है जिसका अनिवार्य अंग शासित वर्गों का दमन है। न्यायालय भी इस वर्ग राजसत्ता का एक अंग हैं। आज पूंजीपति वर्ग का शासन है जिसे बुर्जुआ जनतंत्र कहते हैं अर्थात यह जनतंत्र निजी संपत्ति व मुनाफों के लिए काम करने वाली पूंजीवादी व्यवस्था की राजसत्ता को बनाए रखने का यंत्र है। अत: बुनियादी तौर पर तो यह मजदूर वर्ग पर पूंजीवादी वर्ग का अधिनायकत्व ही है। मगर पूंजीवाद में जब तक आपसी होड का तत्व प्रभावी था और कुछ इजारेदार पूंजीपति राजसत्ता पर हावी नहीं थे तब तक पूंजीवादी जनतंत्र के संसद व न्यायालय आदि अंगों में भी इस होड के लिए जरूरी स्वायत्तता व तुलनात्मक निष्पक्षता का एक पक्ष रहता था, जिसके लिए ही व्यक्ति व नागरिक स्वतंत्रताओं का विचार बुर्जुआ जनतंत्र में आया था। इस तुलनात्मक स्वायत्तता व निष्पक्षता का लाभ उठाते हुए मजदूर वर्ग व अन्य उत्पीड़ित जनता भी अपने अधिकारों के लिए जनवादी संघर्ष का एक स्थान इस व्यवस्था में तब तक पा जाती थी जब तक वह पूंजीवादी व्यवस्था के लिए ही जोखिम न बन जाए। इसीलिए मजदूर वर्ग राजनीति हमेशा न सिर्फ जनवादी अधिकारों की हिफाजत के लिए संघर्ष करती आई है बल्कि वास्तव में बुर्जुआ जनतंत्र में जो जनवादी अधिकार हासिल हुए उनके दायरे को विस्तृत करने का वास्तविक गौरव भी मजदूर वर्ग संघर्षों को ही जाता है।

किंतु जैसे ही पूंजीवाद में इजारेदारी का उभार हुआ और खास तौर पर 1970 के दशक से इसने मजदूर वर्ग पर हमलावर होकर नवउदारवादी नीतियों के रूप में पूंजीवादी लूट को तीक्ष्ण किया है, बुर्जुआ राजसत्ता की तुलनात्मक स्वायत्तता व निष्पक्षता अधिकाधिक दरकती गई है और अब यह इजारेदार वित्तीय व औद्योगिक कॉर्पोरेट पूंजी के एजेंट, सेल्समैन व बाउंसर की भूमिका में आ गई है जिसमें जनवादी अधिकारों की गुंजाइश निरंतर सिकुड़ती गई है। यही समस्त पूंजीवादी देशों में और सभी बुर्जुआ राजनीतिक समूहों में बढ़ती फासीवादी प्रवृत्ति का आधार है। किंतु इसमें भी जब एक संगठित फासीवादी पार्टी सत्ता में आ जाती है तो समस्त जनवादी अधिकारों पर चौतरफा हमले का रुझान ही मुख्य प्रवृत्ति बन जाता है। क्योंकि मौजूदा वक्त में सभी बुर्जुआ समूह व संस्थान फासीवादी रुझान से ग्रस्त हैं इसलिए आज बुर्जुआ जनतंत्र की कोई भी संस्था फासीवादी उभार में अड़चन बनने के बजाय उसके लिए सहायक बन गई हैं अर्थात आज फासीवाद को बुर्जुआ संविधान, संसद, न्यायालय, मीडिया आदि से कोई बाधा नहीं हैं और उसे इन्हें भंग करने की कोई जरूरत नहीं है। भारत में भी संसद व मीडिया के साथ साथ न्यायपालिका का मौजूदा आचरण इसी ओर इंगित करता है। न्यायालयों का मौजूदा आचरण नाजी हरमन गोरिंग की बात याद दिलाता है कि, "कानून व फ्यूहरर की इच्छा एक ही बात है।" या फिर प्रमुख नाजी संविधानविद कार्ल श्मिट की बात कि "कानून एक वस्तुगत कायदा नहीं, फ्यूहरर की इच्छा का स्वत:स्फूर्त प्रस्फुटन है।"

(सौजन्य, मुकेश असीम)

याद दिला रहा हूं कि मोदी जी ने 2022 के लिए क्या-क्या वादे किए थे

गिरीश मालवीय

याद है ना कि 2022 में हम विश्व गुरु बनने वाले थे !!! खैर छोड़िए ! चलिए, जो फैक्ट है उसी पर बात कर लेते हैं ! प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 28 फरवरी 2016 को उत्तर प्रदेश के बरेली में एक किसान रैली को संबोधित करते हुए आधिकारिक तौर पर घोषणा की थी कि आने वाले 2022 में जब देश अपनी आजादी की 75 वीं वर्षगांठ मना रहा होगा, तो किसानों की आय दोगुनी हो चुकी होगी।

- हुई क्या आय दुगुनी ?

2018 मे देश की 72वीं स्वतंत्रता वर्षगांठ के मौके पर लाल किले के प्राचीर से पीएम मोदी ने देश से वादा किया था कि एक भारतीय को हम 15 अगस्त 2022 से पहले अंतरिक्ष में भेजेंगे .....

- भेज दिया क्या अन्तरिक्ष में ?

2015 में जम्मू के रामबन में मोदी ने कहा था कि ' 2022 में जब देश आजादी के 75 साल मना रहा होगा तब देश के हर घर को 24 घंटे बिजली मिलेगी । मेरा लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि वर्ष 2022 तक पूरे देश में चौबीसों घंटे बिजली उपलब्ध हो।'

- मिल रही है क्या 24 घंटे बिजली ?

जापानी प्रधानमंत्री शिंजो आबे 2016 में भारत आए थे और उन्होने बुलेट ट्रेन के लिए एक लाख करोड़ का लोन देने की मंजूरी दी थी तब मोदी सरकार ने 2022 तक बुलेट ट्रेन चलाने की बात की थी।

- चलने लगी क्या बुलेट ट्रेन ?

2017 में प्रधानमंत्री मोदी द्वारा यह वादा किया गया कि '2022 तक हिंदुस्तान के हर परिवार के पास अपना पक्का घर होगा। इसके लिए ग्रामीण क्षेत्र में 3 करोड़ और शहरी क्षेत्र में 1 करोड़ घरों के निर्माण का संकल्प लिया गया है।'

- बन गए क्या 4 करोड़ पक्के मकान ?

मई 2018 में अपनी चौथी सालगिरह से ऐन पहले, मोदी कैबिनेट ने देश में 20 नये एम्स यानी आखिल भारतीय चिकित्सा संस्थान बनाने का ऐलान किया था उससे पहले 2014 से 2018 के बीच के चार सालों में 14 एम्स बनाने की घोषणा की गई थी।

- बताइए देश में कितने नए एम्स वर्किंग कंडीशन में हैं ?

2022 तक पूरी होने वाली नमामि गंगे का क्या हुआ, 2020 तक गंगा 70-80 प्रतिशत साफ करने की बात की गई थी मोदी सरकार ने 2022 तक तो गंगा को पूरी तरह प्रदूषण मुक्त करने का दावा किया।

- हुई क्या गंगा साफ ?

2015 में नरेंद्र मोदी ने वादा किया था कि 2022 तक 100 स्मार्ट सिटी बन जाएगी, याद है न आपको ?

- बताइए आज कितनी स्मार्ट सिटी बनी हैं ?

25 सितंबर 2014 को मोदी ने भारतीय मैन्युफैक्चरिंग को प्रोत्साहित करने के लिए मेक इन इण्डिया प्रोग्राम लांच किया था।

- जरा बताइए कि मेक इन इंडिया के तहत कितने नए कारखाने लगे है ?

यहां ये बताना भी समीचीन है कि भारत का व्यापार घाटा अपने पीक पर है पिछले 8 सालो में चीन से आयात बेतहाशा से बढ़ा है।

स्टार्टअप इंडिया स्टैंडअप इंडिया जैसी योजनाओं का तो अब कोई नाम भी नही लेता जबकि 2014 में इन योजनाओं के जरिए ही भारत की जनता को 2022 के दिवा स्वप्न दिखाए गए थे।

5 ट्रिलियन डॉलर की इकनॉमी का जुमला भी पहली बार 2022 के लिए ही बोला गया था बाद में बदलकर इसे 2025 कर दिया गया !

- बनती हुई दिख रही है क्या आपको 5 ट्रिलियन डॉलर की इकनॉमी ?

सबसे बड़ी बात न्यू इण्डिया बनाने की बात भी 2022 के लिए ही की गई थी जुलाई 2017 में नीति आयोग की मीटिंग में राज्यों के मुख्यमंत्रियों से यह भी कहा था 2022 का 'न्यू इंडिया' भारत की आशाओं और आकांक्षाओं को प्रदर्शित करता है और इसको पूरा करने की ज़िम्मेदारी उनकी है जो सत्ता में हैं।...

2022 खत्म हो गया !....क्या प्रधान मंत्री के रूप में मोदी अपनी असफलता को स्वीकार करेंगे?